Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education

Vol. VII, Issue No. XIV, April-2014, ISSN 2230-7540

भारतीय निर्वाचन प्रणाली में न्यूनताएँ एवं चुनौतियाँ

AN INTERNATIONALLY INDEXED PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL

Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. VII, Issue No. XIV, April-2014, ISSN 2230-7540

भारतीय निर्वाचन प्रणाली में न्यूनताएँ एवं चुनौतियाँ

Praveen Kumar*

Assistant Professor of Political Science, Govt. College Ateli, Haryana

सारांश – निर्वाचन प्रक्रिया में परिलक्षित होने वाली विकृतियों के अनेक संदर्भ प्रभाव की दृष्टि से इतने गंभीर हैं कि निर्वाचन प्रक्रिया पर उनका अनुचित प्रभाव निर्वाचन व्यवस्था की सार्थकता को ही संदिग्ध बना सकता है। निर्वाचन प्रक्रिया की विकृतियों की गंभीरता का अनुभव निर्वाचन तन्त्र से सम्बद्ध उत्तरदायी व्यक्तियों द्वारा भी किया गया है।

---------------------------------X---------------------------------

प्रस्तावना

पूर्व मुख्य निर्वाचन आयुक्त श्री टी.एन. शेषन की इस सम्बन्ध में दी गई टिप्पणी महत्त्वपूर्ण है। आज देश में मूलभूत भ्रष्टाचार निर्वाचन है। वह पूरी तरह कैश, करप्शन, क्रिमिनलिटी अर्थात् धनबल, भ्रष्टाचार और अपराधिकता पर आधारित है। निर्वाचन प्रक्रिया में विगत वर्षों में परिलक्षित हुई विकृतियों में मुख्यतः भुजबल के हस्तक्षेप, सत्ता धन के दूषित प्रभाव की गणना की जाती है। प्रस्तुत पेपर में भारतीय निर्वाचन प्रणाली में विगत वर्षों में परिलक्षित हुई विकृतियों के प्रमुख संदर्भों का विवेचन अपेक्षित है–

1. राजनीति का अपराधीकरणः–

राजनीति के अपराधीकरण का इतिहास नया नहीं है। देश के अधिकांश शीर्षस्थ राजनेताओं द्वारा राजनीति के बढ़ते हुए हस्तक्षेप व राजनीति के अपराधीकरण की प्रक्रिया के सम्बन्ध में चिन्ताएँ व्यक्त की गई किन्तु यह दुखद विडम्बना है कि राजनीति के अपराधीकरण के प्रति राजनेताओं की अभिव्यक्त चिन्ता के पश्चात् भी निर्वाचन राजनीति के मध्य इस तथ्य को राजनेता नजरअंदाज करते रहे हैं और निर्वाचन में अपराधी तत्वों को अभ्यर्थी बनाने का आक्षेप न्यूनाधिक प्रायः सभी राजनीतिक दलों पर लगाया जाता है।

ऐसे अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं जिनमें यह तथ्य प्रमाणिक रूप से देखने को मिलता है कि जिन व्यक्तियों पर अनेकानेक आपराधिक मुकदमें चल रहे थे उन्हें सत्तारूढ़ दल एवं विपक्षी दल दोनों ने ही निर्वाचन संघर्ष में अपना–अपना अभ्यर्थी बनाया है। यहाँ यह कहना असंगत न होगा कि अपराधी तत्वों ने सत्तारूढ़ दल की राजनीति में अपनी भागीदारी को अधिक उपयुक्त माना है।

सितम्बर, 1989 में दिल्ली में हुए एक सेमिनार में पं. कमलापति त्रिपाठी और विपक्ष के नेता चन्द्रशेखर, भाजपा के नेता अटल बिहारी वाजपेयी, मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पाटी के नम्बूदरी पाद और कृष्णकांत ने अपने भाषणों पर जोर दिया कि राजनीति में अपराधी तत्वों के प्रवेश को रोका जाए। इसके पश्चात् पं. कमलापति त्रिपाठी ने इंदिरा कांग्रेस अध्यक्ष को एक पत्र लिखकर यह सुझाव दिया कि अपराधी तत्वों को टिकट न दिया जाये। अमेठी में अपना नामांकन पत्र दाखिल करते हुए राजीव गांधी ने विपक्ष के कुछ नेताओं को हिस्ट्रीशीटर कहा था। किन्तु राजीव गांधी सरकार में पर्यावरण मंत्री, जिया–उल–रहमान अंसारी के विरूद्ध 1 अक्टूबर, 1989 को 29 वर्षीय मुक्ति दत्ता नामक युवती ने उन पर दुर्व्यवहार तथा बलात्कार की कोशिश का आरोप लगाया, फिर भी उन्हें निर्वाचन संघर्ष हेतु अभ्यर्थी बनाया गया।

1999 में 13वीं लोकसभा में भाग लेने वाले उम्मीदवारों में से 1000 ऐसे उम्मीदवार थे जिन पर आपराधिक आरोपों के कारण न्यायालय में मुकदमें विचाराधीन थे। 14वीं लोकसभा निर्वाचन 2004 मुख्य राजनीतिक दलों के उम्मीदवारों में 40 प्रतिशत उम्मीदवारों पर आपराधिक आरोप थे और उनमें से 18 उम्मीदवारों पर भारी आपराधिक आरोप थे। उत्तर प्रदेश में 2007 में हुये विधानसभा निर्वाचन में 582 उम्मीदवारों पर आपराधिक आरोप थे। निर्वाचन आयोग ने 4092 विधायकों में से 700 से ज्यादा विधायकों को उनके शपथ पत्रों के आधार पर आपराधिक आचरण के आरोपों से घिरा पाया।

उपर्युक्त परिप्रेक्ष्य में यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि जनसाधारण की मानसिकता बलवान बनाने की ओर प्रेरित हो रही है, वे ऐसे समूह और संगठनों के सदस्य बन रहे हैं व प्रयत्नशील रहते हैं जो नियोजित रूप से समाज में शक्ति प्रदर्शन के माध्यम से भय और आतंक स्थापित करके अपने उद्देश्यों को पूर्ण करने में दक्ष है।

उपर्युक्त उदाहरण राजनीति के अपराधीकरण की तीव्रता को प्रकट करने के उद्देश्य से प्रस्तुत किये गये हैं। विडम्बना तो यह है कि इसकी तीव्रता को रोकने के उपाय जानबूझकर चिन्तित होते हुए भी सत्तारूढ़ दल व विपक्ष के द्वारा नहीं लिये जा रहे हैं। वोहरा समिति का प्रतिवेदन इस सन्दर्भ में और अधिक चिन्ताओं को उभारता है।

2. निर्वाचन व्यय की समस्या :–

आज विश्व में धन शक्ति की उपयोगिता को प्रत्येक क्षेत्र में स्वीकार कर लिया गया है, इसलिए विश्व के अनेक देशों में धन शक्ति ने निर्वाचन के स्वरूप निर्धारण में अति महत्त्वपूर्ण भूमिका निर्वाह किया है। भारत में धनशक्ति से सम्पन्न लोगों ने राजनीति को अपनी सहचरी बनाकर रखा है, विशेषतः निर्वाचन राजनीति में धन के मर्यादाहीन प्रयोग ने निर्वाचन राजनीति को दूषित ही नही किया गया, अपितु गरीबी का निर्ममतापूर्वक

उपहास भी किया है। इसमें लोकतन्त्र की मूल आत्मा का निष्प्रभावी स्वरूप ही दृष्टिगोचर हुआ है।

अग्रांकित तालिका में, देश में अब तक हुए महानिर्वाचनों में मूल व्यय का विवरण प्रदर्शित है:–

लोकसभा निर्वाचन कितना खर्चीला

लोकसभाओं का क्रम	वर्ष	रुपये (लगभग) करोड में
1 लोकसभा	1952	10.45
2 लोकसभा	1957	5.90
3 लोकसभा	1962	7.81
4 लोकसभा	1967	10.95
5 लोकसभा	1971	14.43
6 लोकसभा	1977	29.81
7 लोकसभा	1980	37.07
8 लोकसभा	1984	85.51
9 लोकसभा	1989	154.22
10 लोकसभा	1991	359.10
11 लोकसभा	1996	597.34
12 लोकसभा	1998	626.40
13 लोकसभा	1999	900.00
14 लोकसभा	2004	1100.00
15 लोकसभा	2009	9700.00

कुल मिलाकर प्रत्येक राजनीतिक दल अपनी शक्ति और सामर्थ्य के अनुसार धनशक्ति की निर्लज्ज व्यवहार में किसी प्रकार की कोई कमी नहीं छोड़ता है। विस्मयकारक तो यह है कि अनेक क्षेत्रीय प्रभाव वाले दलों के प्रत्याशियों में से भी कई टिकट प्राप्त करने में धन शक्ति का सहारा लेते हैं।

प्रारम्भ से ही देश के बड़े औद्योगिक घरानों और राजा–महाराजाओं के परिवारों ने भारतीय गणतंत्र की राजनीति को अपना अनुचर बनाए रखने के लिए निरन्तर कठिन श्रम किया। विभिन्न कोणों से धनशक्ति के द्वारा भारतीय राजनीति पर किए जाने वाले प्रहारों ने धन–बल और सत्ता को प्रभावशाली रूप में एक–दूसरे के नज़दीक ला दिया है। इस प्रकार निर्वाचन राजनीति में धन के प्रभावी उपयोग ने भारतीय राजनीति को निकट रूप से नियन्त्रित किया है। निर्वाचन अभियान में मध्य गरीब जनता को उनके हित के लिए जाने वाले आश्वासनों को निर्वाचित प्रतिनिधियों ने जहाँ एक ओर नकारा है, वहीं लाइसेंस जारी करने में मनमानी, आयात और निर्यात पर नियन्त्रण की व्यवस्था तथा नियन्त्रित अर्थव्यवस्था के माध्यम से धन के प्रभाव को स्वीकारते हुए सम्पन्न लोगों को लाभ पहुँचाने का ही काम किया है।

3. निर्वाचन राजनीति एवं सार्वजनिक घूस :–

भारतीय राजनीति में जनता के एक वर्ग को सार्वजनिक अनुचित लाभ पहुँचाने की प्रवृत्ति विगत कुछ वर्षों से परिलक्षित हुई है। यद्यपि पं. नेहरू के शासनकाल तक यह प्रवृत्ति विकृत स्वरूप ग्रहण नहीं कर सकी थी किन्तु राजनीतिक उद्देश्य व लाभ प्राप्ति की लालसात्मक दुष्प्रवृत्ति ने इसे भारतीय राजनीति का दुखद तत्त्व बना दिया है।

प्रभावशाली एवं सत्तारूढ़ दल के प्रभावी नेतृत्व ने अपने निर्वाचन क्षेत्रों में असन्तुलित एवं अनियमित विकास का क्रम चलाया है। इसने अन्य नेताओं में प्रतिस्पर्धा को भयंकर रूप में उत्पन्न किया है। निर्वाचन अभियान के मध्य राजनीतिज्ञों के द्वारा अपने निर्वाचन क्षेत्र के विकास का जो स्वरूप प्रस्तुत किया जाता है और विकास के जो आँकड़े दिए जाते हैं तथा भविष्य में भी इसी प्रकार विकास जारी रखने के वायदे किए जाते हैं उनसे जनता में एक विशिष्ट प्रकार की रोगात्मक मनोवृत्ति जागृत होती है और वे अपने मताधिकार के उपयोग में निष्पक्षता नहीं बनाये रख पाते हैं– इससे विपक्षी दल का श्रेष्ठ अभ्यर्थी भी मात खा जाता है। इस प्रकार सत्तारूढ़ दल की यह सार्वजनिक घूस की प्रवृत्ति जन मानस को विकृत मनः स्थिति के लिए अभिप्रेरित करती है।

सार्वजनिक घूस की एक अन्य दुष्प्रवृत्ति ने भी जन्म लिया है जिसके अन्तर्गत सत्ताधारी दल व सरकार जनता के द्वारा सरकार व बैंकों के लिए गए कर्ज की व्यापक माफी की घोषणा करने लगी है। हरियाणा के श्री देवीलाल द्वारा कर्ज माफ करने के सम्बन्ध में दिए गए आश्वासन का नवम् निर्वाचन में उनके दल को प्राप्त सफलता में निर्णायक योगदान रहा। इसी भांति केन्द्रीय सरकार द्वारा भी इसी प्रकार के निर्णय 1989 के निर्वाचन के बाद लिए गए। इससे सार्वजनिक धन का अपव्यय हुआ है और लोगों में सरकारी ऋण व धन वापस करने की आदत में शिथिलता व लापरवाही आयी है। जनता में सार्वजनिक धन के उपयोग की मनोवृत्ति में बेईमानी आयी है। इस प्रकार राजनीतिक अभिप्रेरण से होने वाले सार्वजनिक धन के अपहरण को यदि तुरन्त नहीं रोका गया तो देश की अर्थव्यवस्था का ढांचा बैठ जायेगा। राजनीतिज्ञों के द्वारा जनता को भ्रष्ट बनाकर अपने पक्ष में मतदान कराने की आपत्तिजनक प्रवृत्ति को तुरन्त नहीं रोका गया तो आर्थिक लोकतंत्र का स्वप्न कभी भी साकार होने वाला नहीं हैं। सार्वजनिक घूस की यह प्रवृत्ति भारतीय लोकतन्त्र के लिए कलंक ही नहीं है अपितु पतन के लिए उत्तरदायी प्रमाणित होगी।

4. हिंसा व जाली मतदान :–

प्रजातन्त्र में जब तक निर्वाचकों को उनके मताधिकार के प्रयोग में स्वतंत्र इच्छाशक्ति प्राप्त नहीं होगी, तब तक निर्वाचन निष्पक्ष नहीं कहे जा सकते। निर्वाचनों के बाहुबल और हिंसा का प्रयोग, मतदान केन्द्रों का कब्जा और जाली मतदान एक अत्यधिक गम्भीर त्रुटि और समस्या है और इसे सीमित करने के विविध उपाय किए जाने पर भी समय के साथ यह प्रवृत्ति बढ़ती चली जा रही है। निर्वाचन में बाहुबल और हिंसा के प्रयोग की सबसे अधिक प्रवृत्ति तो बिहार राज्य में है। इसके बाद उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पं. बंगाल, जम्मू–कश्मीर तथा विविध महानगरों का झोपड़पट्टी क्षेत्र आता है। हिंसा के प्रयोग से जुड़ी हुई ही एक अन्य स्थिति निर्वाचन में शराब की शक्ति का प्रयोग। 1984 में लोकसभा और 1985 के विधानसभा निर्वाचनों में 'विशेष सुरक्षा व्यवस्था' और सभी एतिहयाती उपाय किए जाने कके बावजूद निर्वाचन में हिंसा के प्रयोग और निर्वाचन के लिए 'मतदान केन्द्रों पर कब्जा' किए जाने की घटनाएँ पहले से कम नहीं हुई। अकेले बिहार राज्य में 2 और 5 मार्च, 1985 के मतदान के दिन 50 से अधिक व्यक्ति हिंसा की बलिवेदी पर चढ़ गए, घायलों की संख्या तो इससे बहुत अधिक थी– बिहार के 34,472 मतदान केन्द्रों पर अर्द्धसैनिक बल का पहरा था, लेकिन आम नागरिक इससे भी अपने आपको सुरक्षित नहीं पाता था, लेकिन इन पहरेदारों की आँखों के सामने ही बन्दूकधारी मतदान केन्द्रों पर कब्जा करते रहे, मतों पर मुहर लगाते रहे और लोगों से मारपीट करते रहे।

1969 में बिहार में 50 बूथ लूटे गए जबकि 1990 के विधानसभा निर्वाचनों में यह आंकड़ा 1231 पर जा पहुँचा। ऐसी स्थिति शांति पसंद विवेकशील व्यक्ति जिनके मत का सबसे अधिक महत्त्व है, अपने मताधिकार के प्रयोग से घबराते और कतराते हैं। यह तथ्य है कि बिहार में निर्वाचनिक सफलता के लिए बन्दूक और माफिया गिरोह की सहायता को आवश्यक माना जाने लगा है। यह आरोप लगाया जाता है कि बिहार पुलिस इसे रोकने का प्रयत्न करने के बजाय इसमें सहयोग देती है। उत्तर प्रदेश के अनेक क्षेत्रों ौर अन्य कुछ राज्यों के विभिन्न क्षेत्रों में भी स्थिति लगभग ऐसी ही है। 1990 के आम निर्वाचन में राज्य में 26 हत्याएँ, 22 हत्या की कोशिशें और 38 लूटपाट की घटनाएँ हुईं जिसमें 695 मतदान केन्द्रों पर फिर से निर्वाचन करवाना पड़ा। चिन्ताजनक बात तो यह देखने को आयी है कि निर्वाचन हिंसा की दुष्प्रवृत्ति आम तौर पर शांत समझे जाने वाले दक्षिण भारत में भी फैल गयी है। आन्ध्र प्रदेश में निर्वाचन हिंसा ने तीन जानें ली थीं और कई लोगों को घायल किया। कर्नाटक में भी कुछ व्यक्ति घायल हुए। 1984 के निर्वाचनों में 48 लोग मारे गये थे। जबकि 1989 में बम विस्फोट, छुरेबाजी और गोली चलाने से 197 लोगों की मृत्यु हुई मुख्य निर्वाचन आयुक्त द्वारा हिंसा की रोकथाम के लिए सभी प्रयत्न किए जाने के बावजूद जब यह सब हुआ तो 5 मार्च, 1985 को मतदान समाप्ति पर उन्होंने खीझकर कहा–'जब तक राजनीतिक दल हिंसा के खिलाफ एक होकर जनमत जागृत नहीं करते, निर्वाचन आयोग और प्रशासन बौना और पंगु बना रहेगा। समस्या का समाधान निर्वाचन आयोग को अधिक अधिकार देने से नहीं वरन् स्थानीय स्तर पर राजनीतिज्ञों और अवांछित तत्वों से सांठ–गाठ समाप्त करने में होगा।'

मई–जून 1991 के लोकसभा निर्वाचनों के समय हुई हिंसा में 350 मारे गए और लगभग 3300 निर्वाचन हिंसा की घटनाएँ हुई। निर्वाचन में बाहुबल और हिंसा का प्रयोग धन की बढ़ती हुई भूमिका की तुलना में भी अधिक चिन्ताजनक स्थिति है और इस स्थिति की रोकथाम के लिए संभावित कदम उठाए जाने चाहिए।

5. निर्वाचन नामावलियों से सम्बन्धित त्रुटियाँ :–

प्रत्येक निर्वाचन से पूर्व निर्वाचक नामावलियाँ सही और पूर्ण होना अति आवश्यक है। किन्तु हमारे यहाँ निर्वाचक नामावलियों में कई प्रकार की त्रुटियाँ देखने को मिलती हैं। जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 की धारा 30 में उल्लिखित है कि निर्वाचन नामावलियों को न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती, जो स्वयं एक भारी त्रुटि है, क्योंकि वर्तमान में निर्वाचक नामावलियों को सत्तारूढ़ दल एवं प्रभावशाली नेता अपने स्वार्थों के अनुरूप बनाने में लगे रहते हैं। स्वयं पूर्व मुख्य निर्वाचन आयुक्त श्री टी. एन. शेषन के शब्दों में निर्वाचक नामावलियों में कई दोष हैं। उन्हीं के अनुसार–"मतदाता सूचियों में तमाम तरह की खामियाँ हैं। ऐसे भी लोग हैं, जिनकी मृत्यु हो चुकी है, पर वे मतदाता सूची में मौजूद हैं, और जो लोग जिन्दा हैं, उनके नाम मतदाता सूची में नहीं हैं। गलती से या संयोग से, कुछ लोगों के नाम अलग–अलग स्थानों की सूचियों में दर्ज हैं। देश में ऐसे भी हिस्से हैं, जहाँ लोगों के नाम जान–बूझकर मतदाता सूचियों से हटा दिए जाते हैं।"

6. मत और परिणाम के मध्य असंतुलन :–

भारतीय निर्वाचनों का नियमन करने वाले जन प्रतिनिधितव अधिनियमों (1950 और 1951) की इस आधार पर गम्भीर आलोचना की जाती रही हैं कि इनके द्वारा स्थापित निर्वाचन पद्धति में सर्वाधिक मत पाने वाला अभ्यर्थी विजयी घोषित कर दिया जाता है, चाहे उसे उस क्षेत्र में डाले गए मतों के 50 प्रतिशत से कम ही मत मिले हों। कुछ राजनीतिक समीक्षकों का यह आरोप है कि इस प्रकार निर्वाचित प्रतिनिधि उस क्षेत्र के बहुमत द्वारा समर्थित नहीं होता है।

यह भी आरोप लगाया जाता रहा है कि इस व्यवस्था में राजनीतिक दलों को प्राप्त मतों और उन्हें प्राप्त सीटों में कोई साम्य नहीं होता।

इससे यह स्पष्ट होता है कि देश की प्रतिनिधि सरकार वस्तुतःजनता के बहुमत का प्रतिनिधित्व नहीं करती। प्रायः अल्पमत से सत्ता प्राप्त दल, पराजित बहुमत पर शासन करता रहा है, समीक्षकों ने इस स्थिति को स्वस्थ लोकतन्त्र के प्रतिमानों के प्रतिकूल माना है।

इसके विकल्प के रूप में प्रायः निर्वाचन की वर्तमान प्रणाली को परिवर्तित कर स्पष्ट बहुमत प्रणाली (अर्थात् 50 प्रतिशत 1), आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली और सूची प्रणाली अपनाने की चर्चा की जाती रही है। अनेक बार वर्तमान संसदीय प्रणाली के स्थान पर अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली अपनाने के लिए भी प्रत्यक्ष प्रच्छन्न वातावरण बनाया जाता रहा है। यह सब इसीलिए चिन्तन का विषय बनता है कि हमारी वर्तमान शासन प्रणाली में निर्वाचन की पद्धति सच्चे प्रतिनिधित्व को प्रतिष्ठित नहीं करती।

7. उदासीन अभ्यर्थियों की समस्या :–

भारतीय निर्वाचन व्यवस्था की एक बहुत बड़ी त्रुटि यह है कि इसमें असंख्य छोटे–छोटे दलों को भी मान्यता मिल जाती है जो निर्वाचन के प्रति प्रायः उदासीन रहते हैं। ऐसी स्थिति में वे दल एवं इसी प्रकार के निर्दलीय निर्वाचन प्रशासन के लिए भारी सिरदर्द बद जाते हैं वे निर्वाचनों को एक मजाक बनाकर रख देते हैं। 2004 के निर्वाचनों में प्रत्याशियों में से 99.37 प्रतिशत निर्दलीय प्रत्याशी अपनी जमानत भी नहीं बचा सकें। उनमें से एक जीता तथा 552 की जमानत जब्त हो गयी थी। निर्दलीय की पिछले कुछ निर्वाचनों में लगातार संख्या रिकॉर्ड स्तर पर बढ़ती जा रही है। जबकि उन्हें प्राप्त मत घटते जा रहे हैं। 1984 में उन्हें 9.41 प्रतिशत, 1989 में 5.25 प्रतिशत तथा 1991 के निर्वाचन में 3.92 प्रतिशत मत ही प्राप्त हुए थे।

'निर्वाचन लड़ना एक लोकतान्त्रिक अधिकार है जो देश के सभी नागरिकों को संविधान ने प्रदान किया है। सभी पूर्ववर्ती लोकसभा में कुछ संख्या में एसे निर्दलीय सदस्य रहे हैं जिन्होंने सदन में कामकाज में महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। कई निर्दलीय नेता ऐसे भी रहे हैं जो अपने निर्वाचन क्षेत्र से एकाधिकार निर्वाचित हुए हैं। निर्दलीय के रूप में निर्वाचन मैदान में उतरने के अधिकार का हनन संसदीय लोकतंत्र में बिल्कुल अकल्पनीय है। राजनीतिक दलों से जुड़ने के साथ विचारों की समानता का सवाल जुड़ा है और किसी के सार्वजनिक जीवन में आने के लिए राजनीतिक दलों से जुड़ना अनिवार्य नहीं किया जा सकता। बहुत से राजनीतिक दलों पर व्यक्तिवाद हावी है और शीर्ष नेता से पटरी नहीं बैठने के कारण पार्टी छोड़कर

निर्दलीय के रूप में निर्वाचन मैदान में आने के उदाहरण पूर्ववर्ती निर्वाचनों में भी मिलते रहे हैं और मौजूदा निर्वाचनों में तो बहुत बड़ी संख्या में सामने आए हैं। उक्त बातें उन निर्दलीय प्रत्याशियों से सम्बन्धित हैं जो गंभीरतापूर्वक निर्वाचन लड़ रहे हैं। उनको क्या कहा जाए जो मात्र मनोरंजन के लिए निर्वाचन मैदान में कूद पड़ते हैं। गत दशकों के निर्वाचनों के दौरान एक सज्जन ने हारने का रिकॉर्ड कायम किया। आम निर्वाचन हो या विधानसभा या कोई उपनिर्वाचन ही हो, वे नामांकन पत्र दाखिल करने पहुँच जाते थे और राष्ट्रपति पद तक का निर्वाचन उन्होंने लड़ा। ऐसे अभ्यर्थी निर्वाचन में खर्च होने वाले सार्वजनिक व्यय को बढ़ाते ही है। इससे भी बड़ी बात यह है कि वे निर्वाचन के वातावरण को बिगाड़ते हैं, ऐसे उदाहरण भी हैं जिन अभ्यर्थियों के बीच मुख्य मुकाबला है उन्होंने वोट काटने के लिए भी किसी निर्दलीय को खड़ा होने को प्रोत्साहित किया तथा ऐसे आक्षेप भी लगाते रहे हैं कि कोई निर्दलीय व्यक्तिगत स्वार्थ सिद्धि करके निर्वाचन मैदान से किसी अन्य अभ्यर्थी के पक्ष में हट गया। इससे निर्वाचन का वातावरण दूषित होता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

अय्यर, एस.पी. तथा श्रीनिवासन, आर (1995). स्टडीज इन इण्डियन डेमोक्रेसी, बम्बई, एलाईड पब्लिशर्स।

अली, सबीक (1959). ए सर्वे ऑफ दी जनरल इलेक्शन्स, 1957, नई दिल्ली, अखिल भारतीय कांग्रेस समिति।

अय्यर, आर.पी. कृष्णा एवं अन्य (सम्पादक), 'ऑल इण्डिया इलेक्शन गाइड', मद्रास, ऑरियन्टल पब्लिशर्स, 1956

बक्शी, पी.एम. (2010). इलेक्शन्स : लॉ एण्ड प्रोसीजन, दिल्ली बिहारी, ब्रदर्स।

भल्ला, आर.पी. (2011). इलेक्शन्स इन इण्डिया, दिल्ली, एस. चॉद एण्ड कम्पनी।

भवगती, जगदीश एन. तथा अन्य (2009). इलेक्टोरल पॉलिटिक्स इन दी इण्डियन स्टेट्स, दिल्ली, मनोहर।

भण्डारी, के (2010). इण्डियाज इलेक्टोरल रिफॉर्म्स, दी इलेक्शन्स आर. कारवेज, नई दिल्ली।

Corresponding Author

Praveen Kumar*

Assistant Professor of Political Science, Govt. College Ateli, Haryana

E-Mail –